जतनलाल रामपुरिया, एडवोकेट

नर-लोक से किन्नर-लोक तक

दैनिक जीवन में कुछ बातें बड़े सहज रूप से सामने आती हैं – इतने सहज रूप से कि उस पर ध्यान नहीं जाता। What is the life that full of care, we have not time to stand and state - नवमी कक्षा के मेरे पाठ्यक्रम की एक कविता की इन प्रारंभिक पंक्तियों में चित्रित, यंत्र युग की व्यस्तता में व्यस्त जीवन की विवशता भी बहुत बार चीजों को अनदेखा, अनसुना करने का कारण बनती है। बाद में घटी घटनाएँ अथवा समय का अन्तराल उनकी गंभीरता का बोध कराता है, ठीक वैसे ही जैसे कहीं चोट लगने के एक-दो दिन बाद उनकी पीड़ा का अनुभव होता है। कभी-कभी, भाग्योदय की वेला में, हमारे पास समय होता है to stand and stare। मनन चिंतन के लिए अवकाश के ऐसे क्षणों में भी वे बातें बालसखा-सी बिना पूछे अचानक आकर गले में बाहें डाले कुछ फुसफुसाती-सी अपना अर्थ बतलाती हैं। अवचेतन मन से चेतन मन में स्थानांतरित होकर वे फिर अनवरत विचारों को झकझोरती रहती हैं। मन में उनकी व्याख्या करने की, उनकी संबद्धता खोजने की विकलता होती है, परन्तु दूसरे छोर पर वे उतने ही तीखेपन से व्याख्यातीत-सी होने का आभास देती रहती हैं।

अपने कुछ ऐसे ही अनुभवों के बारे में मैं बहुत दिनों से लिखने का सोच रहा था, पर वही कठिनाई मुझे घेरे रही, जिसका उल्लेख मैंने ऊपर किया है। जो भावगत रहा उसे शब्दगत करने का सिरा जैसे मैं पकड़ नहीं पा रहा था। आज अचानक दो माह पूर्व का-९ जुलाई २००५ का The Telegraph समाचार पत्र हाथ में आया। सम्पादकीय के नीचे SCRIPTS में Stephen Harold Spender के इस उद्धरण को मैंने पढ़ा–

But reading is not idleness... it is passive, receptive side of civilization without which the active and creative world be meaningless. It is immortal spirit of the dead realised within the bodies of the living.

इसे पढ़कर मुझे अपनी किशोरावस्था और स्कूल के दिन याद आए। दशवीं कक्षा तक सुजानगढ़ (राजस्थान) में पढ़ा था। वार्षिक परीक्षा के बाद दो महीने का ग्रीष्मावकाश होता। 'Idleness' की ही मन:स्थिति के साथ उन छुट्टियों में मैंने प्रेमचंद का पूरा साहित्य, जयशंकर प्रसाद का 'कंकाल' और 'चंद्रगुप्त मौर्य', क.मा. मुंशी का 'जय सोमनाथ', आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की 'बाणभट्ट की आत्मकथा' एवं सेक्सटन ब्लेक सीरीज के कुछ जासूसी उपन्यास पढ़े। साथ ही टॉलस्टाय, चेखव और मैक्सिम गोर्की की कुछ कहानियाँ भी। सन् १९५५ में कलकत्ता आया। सन् २००५ के इस मई महीने के साथ पूरे हुए इन पचास वर्षों में, पढ़ने का शौक होते हुए भी, जो पढ़ सका वह केवल इतना-सा ही है – काव्य कृतियों में प्रसाद की 'आँसू' और 'कामायनी', मैथिलीशरण गुप्त की 'साकेत', कन्हैयालालजी सेठिया की 'निष्पत्ति' और 'हेमाणी', आचार्य महाप्रज्ञ की 'ऋषभायण' और गद्य साहित्य में आचार्य महाप्रज्ञ का 'चित्त और मन', शरतचन्द्र चट्टोपाध्याय का 'गृहदाह', टॉल्स्टाय का 'अन्ना कारेनिना', देवकीनंदन खत्री का 'मृत्यु किरण' व 'रक्त मंडल' और सर आर्थर कोनन डोयल का पूरा कथा-साहित्य। इनके अतिरिक्त गांधी वाङ्मय और पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित कुछ मनन योग्य सामग्री पर भी यदाकदा दृष्टि पड़ी। बस यही।

Idleness के मनोभावों या मनोरंजन की दृष्टि से पढ़ी गिनती की कुछ पुस्तकें विचारों को वह पुष्टता प्रदान नहीं करतीं जो क्रमबद्ध और लक्ष्यप्रेरित अध्ययन से प्राप्त होती है, पर स्टीफेन हेरोल्ड स्पेन्डर के उक्त उद्धरण ने, अब तक जो थोड़ा-बहुत मैंने पढ़ा था उसके संचित प्रभाव (cumulative effect) को मेरे मस्तिष्क में जैसे एक साथ ही जीवित कर दिया और जिस संदर्भ में मैंने इन पंक्तियों को लिखना प्रारम्भ किया था, उसे किंचित विस्तार देने के लिए विवश भी।

It is immortal spirit of the dead realised within the bodies of the living – इस पंक्ति के भावों ने पन्द्रह वर्ष की अवस्था में पढ़ी, हिन्दी की प्रतिनिधि पुस्तकों में एक, आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की उक्त कृति 'बाणभट्ट की आत्मकथा' को

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुन: एक बार मेरे सामने खोल दिया। इस पुस्तक के प्रकाशन की विचित्र पृष्ठभूमि अकस्मात मेरी स्मृति में उभरी। हिन्दी साहित्य को आचार्य द्विवेदी जी को इसके पीछे एक विदेशी महिला की आस्था, निष्ठा और लग्न है, यह कुछ अनहोनी के घटने जैसा लगता है। पुस्तक के कथामुख (भूमिका) और उपसंहार-अभ्यास में जितना कुछ दृश्य है, उससे कहीं अधिक अदृश्य है। इन पंक्तियों का सम्बन्ध इन दो प्रकरणों से ही है, मुख्य कथावृत्त से नहीं। उनमें जो दृश्य है, पहले उसे सार रूप में रखता हूँ।

मिस कैथगईन आस्ट्रिया के एक सम्भ्रांत ईसाई परिवार की महिला थीं। अपने देश में ही उन्होंने संस्कृत और हिन्दी का बहुत अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। भारतीय विद्याओं के प्रति असीम अनुराग के वशीभूत, अड़सठ वर्ष की आयु में वे भारत आईं और आठ वर्षों तक यहाँ के ऐतिहासिक स्थानों का अथक भाव से भ्रमण करती रहीं। आचार्य हजारीप्रसाद जी उन्हें दीदी कहा करते थे जो उनके अंचल में दादी का एकार्थक है। उस वृद्धा का भी उन पर पौत्र के समान ही स्नेह था। अपनी कष्ट-साध्य यात्राओं के बाद जब वे आचार्य जी के उधर से निकलती तब अपनी पाली हुई बिल्ली के अलावा उनके पास जगह-जगह से इकट्ठी की हुई बहुत-सी पुरातन चीजें होतीं। उनका इतिहास बताते समय उनका चेहरा श्रद्धा से गद्‌गद् हो जाता उनकी छोटी-छोटी नीली आँखें भावों के उद्रेकवश गीली हो जातीं। उनकी बालसुलभ निर्मलता भोलेपन की सीमा को छूती थी। उसका लाभ उठा कर कुछ लोग उनके बहुमूल्य संग्रह में से कुछ चीजें दबा लेते। उन्हें उसका पता भी नहीं चलता।

भारत और भारतीय संस्कृति के साथ उनका गहन लगाव, किसी पूर्व जन्म के संस्कारों से अनुबन्धित-सा लगता था। जब वे ध्यानस्थ होती तो उनका वलीकुंचित मुखमंडल बहुत ही आकर्षक लगता और वे साक्षात सरस्वती-सी जान पड़ती। समाधि के उपरान्त उनकी बातों में अनूठी दिव्यता होती।

अंतिम बार वे राजगृह से लौटीं। द्विवेदी जी से मिलीं और बोलीं ''देख, इस बार शोण नद के दोनों किनारों की पैदल यात्रा कर आई हूँ। थकी हुई हूँ। तुम कल आना।'' दूसरे दिन आचार्य जी जब उनके स्थान पर पहुँचे, तब नौकर ने बतलाया कि उस रात वे दो बजे तक चुपचाप बैठी रहीं और फिर एकाएक अपनी टेबल पर आकर लिखने लगीं। रात भर लिखती रहीं। लिखने में इतनी तन्मय रहीं की दूसरे दिन आठ बजे तक लालटेन बुझाए बिना ही लिखती रहीं। फिर टेबल पर ही सिर रख कर सो गईं और अपराह्न तीन बजे तक सोई रहीं। अब वे स्नान कर के चाय पीने जा रही थीं। आचार्य जी को देखकर बहुत प्रसन्न हुईं और बोली 'शोण-यात्रा में मिली सामग्री का हिन्दी रूपान्तर मैंने कर लिया है।... आनन्द से इसका अंग्रेजी में उथला करा ले... और कल पांच बजे की गाड़ी से कलकत्ते जाकर टाइप करा ला। परसों मुझे इसकी कापियाँ मिल जानी चाहिए।'

आचार्य जी ने सकुचाते हुए पूछा, ''दीदी, कोई पाण्डुलिपि मिली है क्या?''

दीदी ने डाँटते हुए कहा, ''एक बार पढ़कर तो देख। ... तू बड़ा आलसी है। देख रे, बड़े दु:ख की बात बता रही हूँ। ... स्त्रियाँ चाहें भी तो आलस्यहीन होकर कहाँ काम कर सकती है?''... तू... बाद में पछतायेगा। पुरुष होकर इतना आलसी होना ठीक नहीं। तू समझता है, यूरोप की स्त्रियाँ सब कुछ कर सकती हैं? गलत बात है। हम भी पराधीन हैं। समाज की पराधीनता जरूर कम है, पर प्रकृति की पराधीनता तो हटाई नहीं जा सकती। आज देखती हूँ कि जीवन के ६८ वर्ष व्यर्थ ही बीत गए।''

दीदी की आँखें गीली हो गईं। उनका मुख कुछ और कहने के लिए व्याकुल था, पर बात निकल नहीं रही थी। न जाने किस अतीत में उनका चित्त धीरे-धीरे डूब गया। जब ध्यान भंग हुआ, तो उनकी आँखों से पानी की धारा बह रही थी और वे उसे पोंछने का प्रयत्न भी नहीं कर रही थीं। आचार्य जी ने अनुभव किया कि दीदी किसी बीती हुई घटना का ताना-बाना सुलझा रही हैं।

आचार्य जी ने कागजों को पढ़ा। शीर्षक के स्थान पर मोटे-मोटे अक्षरों में लिखा था 'अथ बाणभट्ट की आत्मकथा लिख्यते'। पढ़ने के बाद आचार्य जी को लगा कि दीर्घ काल के बाद संस्कृत साहित्य में एक अनूठी चीज प्राप्त हुई है। आचार्य जी को कलकत्ता में एक सप्ताह लग गया। इस बीच दीदी बिना पता-ठिकाना दिये काशीवास करने चली गईं। दो साल तक वह कथा यूँ ही पड़ी रही। एक दिन अचानक मुगलसराय स्टेशन पर गाड़ी बदलते हुए आचार्य जी को वे फिर मिल गईं। आचार्य जी को देख कर जरा भी प्रसन्न नहीं हुई। केवल कुली को डाँटकर कहती रही ''संभाल के ले चल, तू बड़ा आलसी है।'' आचार्य जी ने उन्हें कहा, 'दीदी वह आत्मकथा मेरे ही पास पड़ी है।' दीदी बड़े गुस्से में थीं। रुकी नहीं। गाड़ी में बैठकर उन्होंने एक कार्ड फेंककर कहा, 'मैं देश जा रही हूं। ले, मेरा पता है। ले भला।'

पुस्तक के प्रकाशन के बीच आचार्य जी को आस्ट्रिया से दीदी का पत्र मिला। वह उपसंहार में संकलित है। इस पत्र से कथा का रहस्य और भी घना होता है। साथ ही उसमें लक्षित दृश्य के ऊपर अदृश्य की अवांछित छाया मन में टीस-सी पैदा करती है। उस छाया की, उस अदृश्य की अनुभूति आपको भी हो, इस दृष्टि से उस पत्र को अंशत: नीचे उद्धृत कर रहा हूँ। मगर उद्देश्य केवल उतना ही नहीं। पत्र का कलेवर जितना छोटा है, कथ्य उतना ही गम्भीर और बहुमूल्य है। अतीत के अतल गह्वर से अवतरण लेती कोई दिव्यात्मा जैसे बतला रही है कि किस तरह जगत में सब एक ही ध्रूव पर स्थित हैं। ऊँचा जीवन-दर्शन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लिए यह एक पत्र एक अभिनव, अनूठी अन्त:सृष्टि का बोध कराता है। अदृश्य में से झाँकते उसके इस लावण्य को भी निहारना आप न भूलें।

''छ: वर्षों से आस्ट्रिया के दक्षिणी भाग में निराशा और पस्तहिम्मती की जिन्दगी बिता रही हूँ। तुमने युद्ध के घिनौने समाचार पढ़े होंगे, लेकिन उसके असली निर्घृण क्रूर रूप को तुम लोगों ने नहीं देखा। देखते तो मेरी ही तरह तुम लोग भी मनुष्य-जाति की जययात्रा के प्रति शंकालु हो जाते। ... तूने 'बाणभट्ट की आत्मकथा' छपवा दी, यह अच्छा ही किया। पुस्तक रूप में न सही, पत्रिका रूप में छपी कथा को देख सकी हूँ, यही क्या कम है। अब मेरे दिन गिने-चुने ही रह गए हैं।... मैं अब फिर लोगों के बीच नहीं आ सकूँगी। मैं सचमुच संन्यास ले रही हूँ। मैंने अपने निर्जन वास का स्थान चुन लिया है। यह मेरा अन्तिम पत्र है। 'आत्मकथा' के बारे में तूने एक बड़ी गलती की है। तूने उसे अपने 'कथामुख' में इस प्रकार प्रदर्शित किया है मानो वह 'आटो-बाँयोग्राफी' हो। ले भला! तूने संस्कृत पढ़ी है ऐसी ही मेरी धारणा थी, पर यह क्या अनर्थ कर दिया तूने? बाणभट्ट की आत्मा शोण नद के प्रत्येक बालुका-कण में वर्तमान है। छि:, कैसा निर्बोध है तू, उस आत्मा की आवाज तुझे नहीं सुनाई देती? ... तुझे इतना प्रमाद नहीं शोभता।

उस भाग्यहीन बिल्ली ने बच्चों की एक पल्टन खड़ी कर दी है। ... मैं कहाँ तक सम्हालूँ। जीवन में एक बार जो चूक हो जाती है वह हो ही जाती है। इस बिल्ली का पोसना भी एक भूल ही थी। तुमसे मेरी एक शिकायत बराबर रही है। तू बात नहीं समझता। भोले, 'बाणभट्ट' केवल भारत में ही नहीं होते। इस नर-लोक से किन्नर-लोक तक एक ही रागात्मक हृदय व्याप्त है। तूने अपनी दीदी को कभी समझने की चेष्टा भी की! प्रमाद, आलस्य और क्षिप्रकारिता – तीन दोषों से बच। अब रोज-रोज तेरी दीदी इन बातों को समझाने नहीं आएगी। जीवन की एक भूल – एक प्रमाद – एक असंमजस न जाने कब तक दग्ध करता रहता है। मेरा आशीर्वाद है कि तू इन बातों से बचा रहे। दीदी का स्नेह। – के''

इसे पढ़ कर आचार्यजी के मन में जो प्रतिक्रिया हुई उसका भी उल्लेख यहाँ आवश्यक है – ''मुझे याद आया कि दीदी उस दिन (राजगृह से लौटने के दिन) बहुत भाव-विह्वल थीं। उन्होंने (राजगृह में मिले) एक शृगाल की कथा सुनानी चाही थी। उनका विश्वास था कि (वह) शृगाल बुद्धदेव का समसामयिक था। क्या बाणभट्ट का कोई समसामयिक जन्तु भी उन्हें मिल गया था? शोण नद के अनन्त बालुका-कणों में से न जाने किस कण ने बाणभट्ट की आत्मा की यह मर्मभेदी पुकार दीदी को सुना दी थी। हाय, उस वृद्ध हृदय में कितना परिताप संचित है! अस्त्रियवर्ष की यवनकुमारी देवपुत्र-नन्दिनी क्या आस्ट्रिया-देशवासिनी दीदी ही हैं। उनके इस वाक्य का क्या अर्थ है कि 'बाणभट्ट केवल भारत में ही नहीं होते। आस्ट्रिया में जिस नवीन 'बाणभट्ट' का आविर्भाव हुआ था वह कौन था। हाय, दीदी ने क्या हम लोगों के अज्ञात अपने उसी कवि प्रेमी की आँखों से अपने को देखने का प्रयत्न किया था!... दीदी के सिवा और कौन है जो इस रहस्य को समझा दे? मेरा मन उस 'बाणभट्ट' का सन्धान पाने को व्याकुल है। मैंने क्यों नहीं दीदी से पहले ही पूछ लिया। मुझे कुछ तो समझना चाहिए था। लेकिन 'जीवन में जो भूल एक बार हो जाती है वह हो ही जाती है!'

अब दीदी के पत्र पर पुन: ध्यान दें। Immortal spirit of the dead जिसे आस्ट्रिया की उस वृद्धा ने अपने अंदर realise किया था, उनका पत्र उस realisation की अभिव्यक्ति है। दृश्य और स्पृश्य के इस छोटे-से जगत के पार किन्नर-लोक तक फैले एक ही रागात्मक हृदय के साथ तादात्म्य दीदी को युद्ध की विभीषिका के बीच शोण नद के प्रत्येक बालुका-कण में बाणभट्ट की आत्मा के अस्तित्व की अनुभूति देता है। वही तादात्म्य आस्ट्रिया में भी उनके बाणभट्ट से 'साक्षात्कार' का साक्षी बनता है। सूक्ष्म जगत में दूरी का बन्धन नहीं। बाणभट्ट जन्में और मर गए, यह केवल स्थूल पर टिकी अपारदर्शी आँखों का सत्य है, वहाँ का नहीं। आलस्य, प्रमाद और क्षिप्रकारिता से मुक्त दीदी की आत्मा देह के भीतर भी विदेह में रमती थी। वह अन्तर्जगत की उस रागात्मक लय से अनुबन्धित थी जो अद्वैत रूप में सर्वत्र व्याप्त है और इसलिए शोण नदी की लहरों ने उन्हें वह सब कह दिया जो वे हमें नहीं बतलाती और इसीलिए उसके तट पर बिछे रजकणों ने अक्षर बन कर उनके लिए अतीत के वे पृष्ठ खोल दिए जिन्हें हम नहीं पढ़ पाते।

आस्ट्रिया की वह वृद्धा, जिसे मैंने कभी देखा नहीं, पाँच दशकों से अनजाने रूप में मेरे मन में छाई रही हैं। 'भोले! बाणभट्ट केवल भारत में नहीं होते' इस एक वाक्य में उन्होंने एक महाग्रन्थ की ही रचना कर दी। महाग्रन्थ या महापुरुष, ये किसी को भी सम्पूर्ण जीवनचर्या नहीं सिखाते। यह दायित्व वे कभी लेते ही नहीं। वे केवल हमारी अन्तश्चेतना को जागृत करते हैं और हमें सूत्र देते हैं, उस रागात्मक हृदय के साथ आत्मानुभूति का, जो नर-लोक से किन्नर-लोक तक व्याप्त है। 'बाणभट्ट केवल भारत में ही नहीं होते' — यह कथन वैसा अपनी वृद्धावस्था को भूल कर, सत्य की खोज में भटकती, हर व्यक्ति में बाणभट्ट को देखती, एक जन्तु की आँखों में बुद्ध के संदेश को पढ़ती उस आस्ट्रियन महिला ने मुझे उन अच्छाइयों को, जिनसे प्रकृति ने जड़ और चेतन सबको समान रूप से अलंकृत किया है, देखने की दृष्टि दी, जिनके पास से मैं उस कथन को याद रखे बिना यों ही निकल जाता। सर आर्थर कोनन डोयल के कथा-साहित्य को

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पढ़ते समय उस कथन की गहनता का मुझे और भी तीव्रता से अनुभव हुआ और मुझे लगा कि हितोपदेश की बातें केवल नीतिग्रंथों में ही नहीं, जासूसी कहानियों में भी पढ़ी जा सकती हैं। प्रकाश की किरणें परावर्तित होती हैं ताकि कहीं से कुछ उजाला अंधकार में झाँकता रहे। मन के ब्रह्मांड में भी सद्विचारों के तारे टिम-टिम करते हैं और इसलिए, अन्तरिक्ष की तरह, अन्तर का भी एक-न-एक कोना सदा आलोकित रहता है – सर डोयल की कहानियाँ मुझे यह कहती-सी प्रतीत हुई। अपनी उस अनुभूति को भी आज व्यक्त करता हूँ।

सर आर्थर कोनर डोयल विश्व के सर्वाधिक पढ़े जाने वाले लेखकों में से एक हैं। लगभग सभी देशों की प्रमुख भाषाओं में उनकी रचनाओं का अनुवाद हुआ है। गहन षडयंत्रों की पृष्ठभूमि पर बुना सशस्त कथानक, रोमांचक परिस्थितियाँ, अविरल प्रवाह, बाँध लेने वाली भाषा, चुस्त संवाद और अमलिन अभिव्यक्ति - इन सबके सम्मिलित स्वरों ने उनके साहित्य को वह ऊँचाई दी है जहाँ पहुँचकर लेखनी तूलिका बनती है और लेखन एक जीवंत चित्र-कृति की आकृति लेता है। अपराध जगत की जटिल गुत्थियाँ उनकी कथाओं के विषय हैं और उन्हें सुलझाने में मन और मस्तिष्क की अतल गहराइयों तक उलझे शरलॉक होम्स नाम के गुप्तचर उन कथाओं के नायक। सर डोयल के उपन्यासों और कहानियों में एक ओर हिंसा और प्रतिहिंसा, घात और प्रतिघात व प्रहार और प्रतिशोध के दुर्दान्त चक्रव्यूह हैं तो दूसरी ओर अपराधों के प्रति निर्लिप्त और उदासीन बने रहकर उन्हें देखते रहने की प्रवृत्ति के साथ समझौता न कर पाने की शरलॉक होम्स की विवशता है।

भय और आतंक, उत्पीड़न और अत्याचार एवं कपट और क्रूरता की शतरंज बिछाए माफिया वृत्ति के जीवित मोहरे और उन्हें मात देने के लिए कटिबद्ध अपने प्राण हथेली में लिए उनके पीछे लगे शरलॉक होम्स! फिर भी हजारों पृष्ठों के साहित्य में दो-चार स्थलों को छोड़ कर कथा-नायक होम्स द्वारा न कहीं हथियारों का उपयोग हुआ है, न ही कहीं हाथों का। अपराध और जुड़े घटनाक्रम पर वे अपने घर में बैठे विभिन्न कोणों से चिन्तन करते हैं, सुरागों को जांचते-परखते हैं और art of deduction की अपनी अद्भुत क्षमता के बल पर उन सूत्रों तक पहुँचते हैं जो अपराधी के मन्तव्य और उसकी प्रणाली को स्पष्ट करते हैं। अन्ततः जब वे अपराधी को कानून के सुपुर्द करते हैं, या कुछ कथाओं में जब वह मरता है तो जैसे अपने कर्मों का ही फल भोग रहा होता है। होम्स के मन में अपराधी के प्रति कोई द्रोह, दुर्भाव नहीं होता इसलिए एक प्रतिद्वन्द्वी द्वारा पराजित किए जाने का भाव अपराधी को पीड़ा नहीं देता। उसे अपने दुष्कर्मों का, अपने पापों का बोध होता है या फिर आदमी द्वारा बनाई गई दोषपूर्ण और नकारात्मक व्यवस्था का वह पक्ष सामने आता है जो उसे अपराध करने के लिए विवश करता है।

चार उपन्यास और छप्पन कहानियों में, अधिकांश जिनमें बहुत लम्बी हैं, न कहीं श्लीलता का उल्लंघन है न अपराधी के प्रति हिंसक भावों का उद्रेक। अपराधों की पृष्ठभूमि पर भी ऐसा साफ-सुथरा सृजन कैसे संभव हुआ? कर्म-नियति के स्वतःस्फूर्त और स्वचालित अनुशासन के अधीन, दुष्कर्म स्वयं ही कर्ता को सजा देते हैं – दर्शन-ग्रन्थों का यह सार जासूसी कहानियों में कैसे प्रवाहित हुआ? शरलॉक होम्स के साहसिक और संकटपूर्ण कारनामों को पढ़ते समय मुझे बार-बार ऐसा लगता रहा कि उसके रचनाकार सर आर्थर कोनन डोयल भी भाव-जगत की उसी प्रकम्पन-शृंखला से बंधे थे, बाणभट्ट से दीदी तक जिसका संचरण था और उन सब तक है जो नर-लोक से किन्नर-लोक तक एक ही रागात्मक संवेदना का अनुभव करते हैं और उस रागात्मकता में, दीदी की तरह, राग-मुक्त होने की ध्वनि सुनते हैं। जिस तरह बाणभट्ट केवल भारत में ही नहीं होते, उसी तरह हितोपदेश भी केवल ज्ञान-ग्रन्थों में ही सीमित नहीं हैं। वह सियार जो दीदी को बुद्ध का समसामयिक लगा था, उनके संदेश को सर डोयल की लेखनी में भी डाल देता है!

कहीं पढ़ा था – 'उस मक्खी का भाग्य कोई कैसे बदले जो गन्दगी पर ही बैठती है'। मधु से परिचय ही उसका भाग्य बदल सकता है। 'बाणभट्ट केवल भारत में ही नहीं होते' – इसका कथ्य उसके पंखों को फूलों की ओर उड़ना सिखाता है और उसे पराग की पहचान देता है। दीदी की यह बात हमें बतलाती है कि जड़ और चेतन का समन्वित रूप ही पूर्ण सत्य है, पर उसे देख पाने की क्षमता चक्षुओं में नहीं, हमारे निरामय मनोभावों में है और उन क्षणों में है जब हमें अवकाश होता है to stand and stare, जब हमे अवकाश होता है to stand and pick up all that is good around us, जब हमें अवकाश होता है to stand and see a lovely garden in a single rose और जब हमें अवकाश होता है to stand and realise the immortal spirit of the dead within us.

अतीत की अमृत ऊर्जा के स्पन्दनों की अनुभूति हमें वहाँ ले चलती है जहाँ सत्य है, शिव है, सुन्दर है, जिन्हें दीदी शोण नदी के बालुका कणों से लेकर आस्ट्रिया तक बाणभट्ट के रूप में खोजा करती थीं और देख भी लेती थीं।

■

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org